छायावादोत्तर कविता में मानवीय मूल्यों का साक्षात्कार :

डॉ विद्यासागर उपाध्याय

छायावादोत्तर कविता को आये हुये कई दशक से अधिक समय बीत गया है। अपनी अनन्त एवं विराट संभावना के कारण ही इसका बहुविध विकास संभव हो सका है। इस विकास क्रम में छायावादोत्तर कविता को लम्बे समय तक काफी संघर्षों का सामना करना पड़ा है। फिर भी इस नई काव्य चेतना ने अपनी स्थिति को साफ और सुदृढ़ करने की दिशा में प्रशंसनीय प्रयास किया। आज छायावादोत्तर कविता का प्रतिष्ठित एवं स्थापित स्वरूप हमारे समक्ष है। उसका कथ्य विस्तृत और व्यापक है।

छायावादोत्तर कवि के मूल प्रतिज्ञानुसार संसार का कोई भी विषय कविता का विषय हो सकता है। इसीलिये आलोच्ययुगीन कविता विषयवस्तु सम्बन्धी परम्परागत चौखटों सें बाहर निकलने के लिये छटपटाती हुई नजर आती है। अपनी इस प्रतिज्ञा का निर्वाह करने में काफी हद तक कामयाब हुई और कविता में काव्यात्मक सरोकारों का क्षेंत्र बहुत विस्तृत हुआ। इस युग की कविता के कथ्य को किसी खास सीमा के अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता है क्योकि इसके अपरिमित कथ्य की बहुज्ञता को कोई बन्धन स्वीकार्य नहीं है।

कविता का कथ्य जीवन और जगत के सम्पूर्ण अनुभव, स्थितियों और वस्तुओं से निर्मित होता है। अतः आज रचनाकार कविता और उसके कथ्य को किसी फ्रेम में मढ़ने में असमर्थ है। इसकी विषय वस्तु में वैविध्य है। डां कांति कुमार का भी कथन है कि "यदि जन्म से लेकर मृत्यु तक की विभिन्न अनुभूतियों अथवा कैक्ट्स से लेकर शुक्रतारा तक जगत की विभिन्न वस्तुओं पर लिखी गई कविताओं का एक संकलन तैयार करना हो तो इस युग की कविता के पूर्ववर्ती काव्य की सीमा और संकीर्णता अपने आप स्पष्ट हो जायेगी। विषय वस्तुओं के वैविध्य के कारण नये कवियों को ज्ञान विज्ञान के सभी क्षेत्रों से अपनी सामग्री संकलित करने का स्वप्न प्राप्त हो गया है। छायावादोत्तर कविता का कवि केवल सहृदय व्यक्ति नहीं होता, यह जानकार व्यक्ति भी होता है। अभी तक साहित्य में सत्यों, तथ्यों अथवा कृत्यों की जानकारी एक सीमा तक ही कवि के लिये अपेक्षित मानी गई थी। आज इस सीमा का कोई अंत नहीं रह गया है।[1] सम्प्रति, छायावादोत्तर कवि संपूर्ण जीवन जगत के अनुभवों और वस्तुओं को अपनी कविता में स्थान देते रहे हैं। अतः इस युग की कविता के महत्वपूर्ण कथ्यों पर अलग–अलग विचार करना अपेक्षित है।

आलोच्ययुगीन कविता को मानवीय साक्षात्कार की कविता कहना आखिरी हद तक उसकी अहमियत और अच्छाई को स्वीकार करना है। यह आस्था और विश्वास की कविता है जिसका गहरा संबंध मानवीय अनुभवों और स्थितियों से है। कतिपय आलोचकों ने इस युग की कविता को अनास्था और अंधकार की कविता कहा लेकिन इन कवियों में यह अनास्था और अविश्वास इतिहासबोध के कारण है। जो कुछ भी हो इस युग की कविता से पूर्व की काव्यधारा में जीवन जगत के विस्तार से इतना गहरा साक्षात्कार नहीं मिलता है। अज्ञेय, शमशेर बहादुर सिंह, गिरिजा कुमार माथुर, मुक्तिबोध तथा रघुबीर सहाय की कविता में मानवीय आस्था की अवस्थिति द्रष्टव्य है।

शमशेर बहादुर सिंह ने अपनी कविता में जीवन को मृत्यु से श्रेष्ठ मानतें हुये आस्था का विशिष्ट रूप उजागर किया है। उन्होंने कहा भी है – **"तू क्षुद्र मरण से जीवन को श्रेष्ठ जान।**'' रघुबीर सहाय ने मानवीय आस्था में 'एकोऽहं बहुस्याम' की उद्घोषणा की है। वस्तुतः आलोच्ययुगीन कविता में अनगिनत मानव सम्बन्धों का अन्वेषण और उल्लेख किया गया है। मानवीय नियति से एक नये सरोकार ने कविता में अपने को सम्बन्धों के रचनात्मक अन्वेषण के माध्यम से व्यक्त किया है। इस परिप्रेक्ष्य में अज्ञेय मानवीय और चीजों के संसार में अकेलेपन के कवि हैं।''[2] उनके जैसे अभिजात्य रचनाकार की कविता में भी मानवीय सरोकार की मौजूदगी को देखा जा सकता है–

''जो भी जहां पिसता है, पर हारता नहीं, न मरता है–
पीड़ित श्रमरत मानव, अविजित दुर्जेय मानव
कमकर, श्रमकर, शिल्पी, स्रष्टा, उसकी मै कथा हूँ[3]

ऐसा प्रतीत होता है कि उपर्युक्त उद्धरण में जिस मानव का चित्र उपस्थित किया गया है, वह महामानव या अतिमानव नहीं, बल्कि हमारे ही बीच का समूह मानव है। आम आदमी जिसे नये कवियों और आलोचकों ने 'लघुमानव' की संज्ञा दी है, उसे छायावादोत्तर कविता ने कई शक्लों में उपस्थित किया है। फिर भी इस मानव और इसकी आस्था के अन्वेशण की आवश्यकता इसलिये है कि इतिहास के सुपरमैन या जनसत्ता के अधिनायक अथवा देवदूत या मसीहा ने अपनी समस्त महत्ता को लघुमानव की बलि देकर ही अपनाया है।"[4] सच तो यह है कि नई कविता में जिस लघुमानव की प्रतिष्ठा की गई वह अपनी लघुता में महत्ता लिये है। लक्ष्मीकान्त वर्मा की 'एक लघु अस्तित्व की सार्थक' मांग शीर्षक कविता में लघुता की महत्ता का विस्तार द्रष्टव्य है:–

"एक महान फलक पर अकेला एक बिन्दु, समूचे शून्य को अपने अस्तित्व में संजोता
अपनी लघुता से फलक का विस्तार प्रेषित करता, हर आकृति के अस्तित्व को संतुलित करता
सम्पूर्ण व्याप्ति का साक्षी, पर अपने में पूर्ण चेतन अखण्ड प्रवाहमान दीप्त स्वयुत अ–महान।"[5]

इस युग के कवियों ने इतिहास नियामक व्यक्तियों की तुलना में मामूली आदमी का अधिक उल्लेख किया है। प्रायः छायावादोत्तर कवियों ने अपनी कविता में आभिजात्य को अस्वीकारा है और अदना आदमी को स्वीकारा है। "खासकर नई कविता में अदना आदमी और उसके सुख–दुःख की अनुभूतियों का अंकन लघुता की महत्ता को स्वीकारने के लिये किया गया है।"[6] कीर्ति चौधरी ने अपनी कविता के माध्यम से अभिजात्य को अस्वीकारा है और लघुता को स्वीकृति दी है–

"मेरे गीतों, मेरी बातों में यहां वहां
जो जिक्र असाधारणता के हैं दिख जाते, वे सभी गलत।
सारा जीवन मेरा साधारण ही बीता
हर सुबह उठा तो काम काज, दफ्तर, फाइल

झिड़की, फटकारें वही–वही कहना सहना।

मैने कोई भी बड़ा दर्द तो सहा नहीं

कुछ क्षण भी मुझ संग हर्ष तो रहा नहीं

जो दृढ़ता दर्प पंक्तियों में मैने बांधा,

वह मुझमें क्या, मेरी अगली पीढ़ी में भी संभाव्य नहीं।"[7]

आलोच्ययुगीन कविता का यह अदना आदमी समकालीन तन्त्र के लिये बिल्कुल नगण्य है और इतिहास ने तो सर्वदा टुच्चे हिरोइज्म की चाटुकारिता की है। इसमें मामूली आदमी के सुख–दुख का उल्लेख कहां मिलेगा ? परन्तु नये कवि विजयदेव नारायण साही ने गैर असरदार मामूली आदमी की व्यथा को इस प्रकार व्यक्त किया है–

"तुम हमारा जिक्र इतिहासों में, नहीं पाओगे,

और न उसका कराहना जो तुमने उस रात सुनी

क्योंकि हमने अपने को इतिहास के विरूद्ध दे दिया है

लेकिन जहां तुम्हें इतिहासों में छूटी हुई जगह दीखें

समझना हम कहां मौजूद थे।"[8]

मुक्तिबोध को अनास्था और संशय का भी कवि कहा जाता है परन्तु मामूली आदमी के सन्दर्भ में मुक्तिबोध की कविताएं अप्रासंगिक नहीं मालूम पड़ती हैं। मुक्ति बोध में किसी भी छायावादोत्तर कवि से सामाजिक सरोकार कम नहीं है। उनका यह मानवीय सरोकार बनावटी नहीं बल्कि ठोस सच्चाइयों की पहचान उनकी कविता में ज्यादा साफ ओर वास्तविक है। उनकी कविता में मानवीयता से जुड़ने की कोशिष साफ–साफ पहचानी जा सकती है–

इसीलिये कि जो है उससे बेहतर चाहिये

पूरी दुनिया को साफ करने के लिये मेहतर चाहिये

वह मेहतर मैं हो नहीं पाता।[9]

अधिकांश छायावादोत्तर कविताएं सामाजिक सरोकार से सम्बद्ध हैं। अज्ञेय की **'मैं कहां हूँ'**, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की **'पोस्टर और आदमी'**, अनन्त कुमार 'पाषाण' की **'बम्बई का क्लर्क'** आदि कविताएं सामाजिक दुख दर्द की कथा कहती हैं। रघुवीर सहाय की कविता के रामलाल, मैकू, खुशीराम और बीस बरस का नरेन, लीलाधर जगूड़ी का 'बलदेव खटिक' और धूमिल का 'मोचीराम' छायावादोत्तर कविता की समीक्षा शब्दावली में लघुमानव है। वास्तविकता को काव्य में अवतरित करने का ऐसा सीधा प्रयत्न इतने प्रबल आग्रह के रूप में कभी नहीं हुआ था और इसका प्रमाण यह है कि सम्भवतः आलोच्ययुगीन कविता के पहले कभी मानवीय सम्बन्धों को इतना गौरव नहीं मिला था और न ही उसमें निहित करूणा, तनाव, अकेलापन, आतंक, सुख और आह्लाद सीधे और स्पष्ट शब्दों में अभिव्यक्त ही हुये हैं जितना कि छायावादोत्तर कविता आसपास बिखरे हुये जीवन की सम्पूर्ण जटिलता एवं संकुलता से साक्षात्कार कराती है।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ0 कान्ति कुमार, नयी कविता, साहित्य संसार, नरसिंह नगर, म0प्र0, 1988 पृ0 सं0 232
2. अशोक वाजपेयी, 'फिलहाल' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1970 पृ0सं0 161
3. तारसप्तक (सं0–अज्ञेय) भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1981, पृ0 307
4. लक्ष्मीकांत वर्मा, नई कविता के प्रतिमान, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1971, पृ0 161
5. लक्ष्मीकांत वर्मा, अतुकान्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2003, पृ0 67
6. डॉ0 यश गुलाटी, कविता और संघर्श चेतना, पंचकूला प्रकाशन, हरियाणा, पृ0 64, 65
7. तीसरा सप्तक (सं0 अज्ञेय) (प्र.स.) भारतीय ज्ञानपीठ, 1979 पृ0 63
8. मछलीधर, विजयेदेवनारायण साही, पृ0 10
9. मुक्तिबोध, चाँद का मुंह टेढा है, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, 1975, पृ0 106

———————————————————

आर0डी0एस पी0जी0, कालेज कुसॉव
जौनपुर